चलो फिर अहिंसा के बिरवे उगाएँ

प्रसंगवश भगवान महावीर की जयन्ती पर अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य तुलसी के विचार मननीय प्रतीत हुए कि सभी व्यक्ति अहिंसा की शीतल छाया में विश्राम पाने के लिए उत्सुक रहते हैं, सत्य का साक्षात्कार करना चाहते हैं. अहिंसा का क्षेत्र व्यापक है. यह सूर्य के प्रकाश की भांति मानव मात्र और उससे भी आगे प्राणी मात्र के लिए अपेक्षित है. इसके बिना शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की बात केवल कल्पना बनकर रह जाती है. अहिंसा का आलोक जीवन की अक्षय संपदा है. यह संपदा जिन्हें उपलब्ध हो जाती है, वे नए इतिहास का सृजन करते हैं. वे उन बंधी-बंधाई परंपराओं से दूर हट जाते हैं, जिनकी सीमाएं हिंसा से स्पृष्ट होती हैं. परिस्थितिवाद का बहाना बनाकर वे हिंसा को प्रश्रय नहीं दे सकते.

अहिंसा की चेतना विकसित होने के अनंतर ही व्यक्ति की मनोभूमिका विशद बन जाती है. वह किसी को कष्ट नहीं पहुंचा सकता. इसके विपरीत हिंसक व्यक्ति अपने हितों को विश्व-हित से अधिक मूल्य देता है. किंतु ऐसा व्यक्ति भी किसी को सताते समय स्वयं संतप्त हो जाता है. किसी को स्वायत्त बनाते समय उसकी अपनी स्वतंत्रता अपहृत हो जाती है.

किसी पर अनुशासन थोपते समय वह स्वयं अपनी स्वाधीनता खो देता है. इसीलिए हिंसक व्यक्ति किसी भी परिस्थिति में संतुष्ट और समाहित नहीं रह सकता. उसकी हर प्रवृत्ति मं एक खिंचाव-सा रहता है. वह जिन क्षणों में हिंसा से गुजरता है, एक प्रकार के आवेश से बेभान हो जाता है. आवेश का उपशम होते ही वह पछताता है, रोता है और संताप से भर जाता है.

हिंसक व्यक्ति जिस क्षण अहिंसा के अनुभाव से परिचित होता है, वह उसकी ठंडी छांह पाने के लिए मचल उठता है. उसका मन बेचैन हो जाता है. फिर भी पूर्वोपात्त संस्कारों का अस्तित्व उसे बार-बार हिंसा की ओर धकेलता है. ये संस्कार जब सर्वथा क्षीण हो जाते हैं तब ही व्यक्ति अहिंसा के अनुत्तर पथ में पदन्यास करता है और स्वयं उससे संरक्षित होता हुआ अहिंसा का संरक्षक बन जाता है.अहिंसा के संरक्षक इस संसार के पथ-दर्शक बनते हैं और हिंसा, भय, संत्रास, अनिश्चय, संदेह तथा असंतोष की अरण्यानी में भटके हुए प्राणियों का उद्धार करते हैं.

इसी तरह डॉ.जगदीश व्योम की ये पंक्तियाँ भी हमें अहिंसा को जीवन मूल्य के रूप में अपनाने की सीख दे रही हैं –

चलो फिर अहिंसा के बिरवे उगाएँ !
बहुत लहलही आज हिंसा की फसलें
प्रदूषित हुई हैं धरा की हवाएँ।
चलो फिर अहिंसा के बिरवे उगाएँ।।

बहुत वक़्त बीता कि जब इस चमन में
अहिंसा के बिरवे उगाए गए थे
थे सोये हुए भाव जन-मन में गहरे

पवन सत्य द्वारा जगाये गये थे,
बने वृक्ष, वट-वृक्ष , छाया घनेरी
धरा जिसको महसूसती आज तक है
उठीं वक़्त की आँधियां कुछ विषैली
नियति जिसको महसूसती आज तक है,
नहीं रख सके हम सुरक्षित धरोहर
अभी वक़्त है, हम अभी चेत जाएँ।
चलो फिर अहिंसा के बिरवे उगाएँ।।

नहीं काम हिंसा से चलता है भाई
सदा अंत इसका रहा दु :खदाई
महावीर, गाँधी ने अनुभव किया, फिर
अहिंसा की सीधी डगर थी बताई
रहे शुद्ध-मन, शुद्ध-तन, शुद्ध-चिंतन
अहिंसा के पथ की यही है कसौटी
दुखद अन्त हिंसा का होता हमेशा
सुखद खूब होती अहिंसा की रोटी
नई इस सदी में, सघन त्रासदी में
नई रोशनी के दिये फिर जलाएँ।
चलो फिर अहिंसा के बिरवे उगाएँ।

————————————————

प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, शासकीय
दिग्विजय महाविद्यालय,राजनांदगांव।
मो.9301054300

.